कहानी

मुझे समझ नहीं आता

एम आर रेणुकुमार

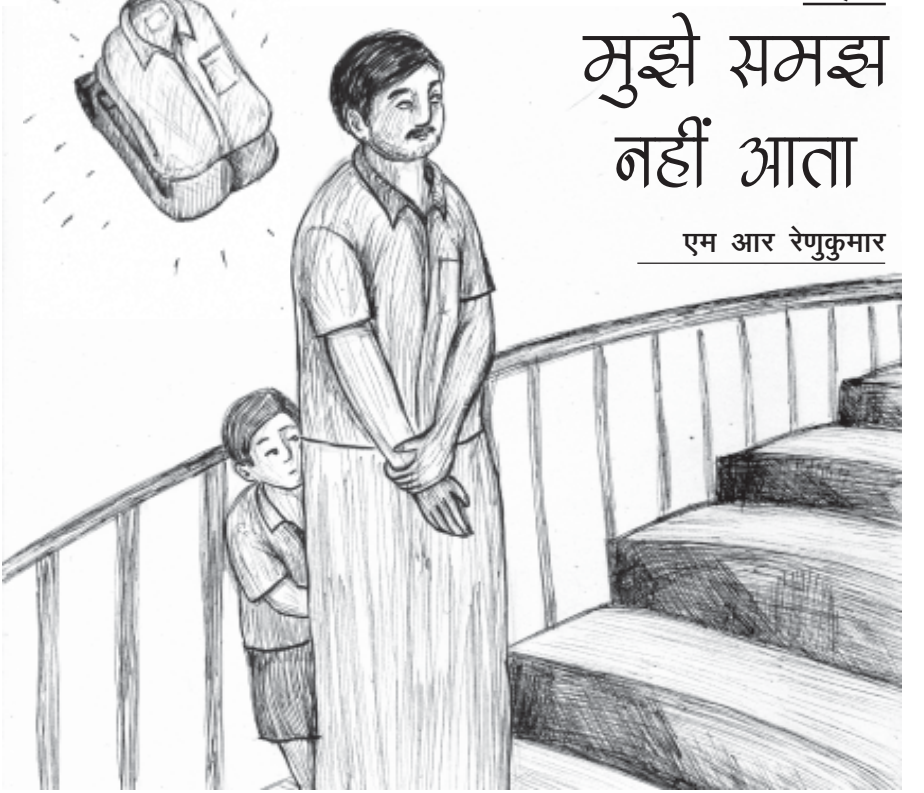

उस दिन अच्चन[1] पहली दफा मुझे अपने साथ शहर ले गए थे। वे शहर में एक बैंक में काम करते थे। वे वहाँ साफ-सफाई का काम करते थे और कुछ दूसरे छोटे-मोटे काम कर दिया करते थे। इस नौकरी से ही वे अपने परिवार को पाल रहे थे जिसमें मेरी माँ और हम पाँच भाई-बहन थे। मैं परिवार में सबसे छोटा था। मेरे दो भाई और दो बहनें थीं। जैसा रोज़ होता था, अच्चन सुबह जल्दी ही बैंक चले गए थे, पर पता नहीं किस कारण से घर वापस आ गए थे। जब वे वापस बैंक जाने लगे तो उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैं उनके साथ चलना चाहूँगा। मैं तो इसके लिए उधार ही बैठा था और दौड़कर उनके साथ हो लिया।

[1] *मलयालम में पिता को अच्चन कहते हैं।*

अच्चन कितनी ऊँची बिल्डिंग में काम करते थे! उसकी ऊँचाई देखकर ही मुझे चक्कर-सा आने लगा। ऐसा लग रहा था मानो एक के ऊपर एक, बड़ी-बड़ी माचिस की डिबियों का ढेर लगा दिया गया हो! मैंने गिनती की। सात मंज़िलें थीं! मुझे लगा कि अगर मैं सबसे ऊपरी मंज़िल पर पहुँच जाऊँ तो रूई जैसे मुलायम बादलों को छू सकूँगा! मन में आया कि अच्चन से कहूँ कि वे मुझे सबसे ऊपरी मंज़िल पर ले जाएँ। फिर लगा कि रहने देता हूँ, नहीं तो वे गुस्सा न हो जाएँ। बड़ी मुश्किल से तो वे मुझे अपने ऑफिस ले गए थे जिसके लिए मैं लम्बे समय से उनके पीछे पड़ा था। आप अच्चन के बारे में कुछ नहीं कह सकते थे कि कब उन्हें गुस्सा आ जाए और कब वे प्यार भरी बातें करने लगें।

"वहाँ मुँह बाए मत खड़े रहो। इधर आओ," अच्चन ने मुझे अन्दर बुलाया।

ज़ीना ऊपर की तरफ घूम गया। मैं अच्चन के पीछे-पीछे चल दिया। उनकी सीढ़ी चढ़ने की रफ्तार देखकर मैं चकित था। वे एक बार में कई सीढ़ियाँ चढ़े जा रहे थे। फिर मैंने देखा कि कोई हाथ में कागज़ों का ढेर लिए नीचे उतर रहा था। जब अच्चन ने उस आदमी को देखा तो अपनी मुण्डू[2] को ठीक किया और बड़ी विनम्रता के साथ एक तरफ हो गए। उस व्यक्ति की झक्क सफेद शर्ट और पैंट से मानो तेज़ प्रकाश निकल रहा था।

"क्या बात है जॉन?" उस आदमी की आवाज़ में घमण्ड झलक रहा था।

"कुछ नहीं, सर।"

ऐसा लगा जैसे अच्चन थोड़े संकुचा-से गए थे।

"यह क्या तुम्हारा बेटा है?" उन्होंने मेरी तरफ देखकर पूछा जब मैं अच्चन के पीछे छुपने की कोशिश कर रहा था।

"हाँ, सर... यह ऑफिस देखने के लिए बहुत समय से मेरे पीछे पड़ा था।"

"हाँ, तो इसमें गलत क्या है? तुम इसे ऑफिस दिखा दो, और जाने से पहले मुझसे मिलकर जाना, ठीक है?"

अच्चन ने 'हाँ' में सिर हिला दिया। चमकदार सफेद कपड़े पहने वह व्यक्ति नीचे उतरने लगा। ज़ीने पर काफी जगह थी, फिर भी उस व्यक्ति के लिए जगह बनाने के लिए अच्चन मानो और सिकुड़ गए। मैं अच्चन की मुण्डू से चिपका रहा।

"आ जाओ बेटा।" जैसे ही वह आदमी गया, ऐसा लगा कि अच्चन सामान्य हो गए और वापस अपने 'आकार' में आ गए। अब हम माचिस की दूसरी डिबिया में थे।

अच्चन ने मुझे एक कोने में पहेल दिया जहाँ पास में एक गहरे हरे रंग की लोहे की अलमारी रखी थी। "यहाँ

[2] *दक्षिण भारत में पहना जाने वाला, कमर से नीचे तक का लुंगी जैसा पहनावा।*

खड़े रहो। सर लोगों को परेशान नहीं करना। मैं अभी आता हूँ," अच्चन बोले। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि वे रूखे ढंग से और गुस्से में क्यों बोल रहे थे। उन्होंने मुझे बहुत बुरे ढंग से पकड़कर उस कोने की तरफ धकेल दिया था। उन्होंने मुझे ऐसे पकड़ा था कि मेरी बांह में दर्द होने लगा था। फिर अच्चन ने मोटे शीशे के बने दरवाज़े को खोला और भीतर चले गए। भीतर बहुत-से लोग बैठे थे और कुछ-कुछ कर रहे थे। कुछ खड़े भी थे। कुछ लोग यहाँ-से-वहाँ घूम रहे थे और बहुत गम्भीर दिख रहे थे। मैं वहाँ खड़ा इन सारी गतिविधियों को देख रहा था। फिर मुझे कौवे की आवाज़ सुनाई दी। कौवा, और यहाँ! मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने मुड़कर देखा। मेरे पीछे, बाईं तरफ, एक खिड़की में से मुझे आसमान का नीला चौकोर टुकड़ा और उस तक फैली एक डाली दिखाई दे रही थी। उस डाली पर कुछ कौवे बैठे थे। मैं उन्हें देख रहा था कि तभी वही आदमी, जिसे अच्चन ने 'सर' कहकर बुलाया था, ऊपर आ गया। इस बार उसके हाथ में कागज़ों का कोई ढेर नहीं था।

"जॉन कहाँ है बेटा?" उसने मुझसे पूछा। अचानक मेरा गला सूख गया। मेरी तो आवाज़ ही नहीं निकली।

"तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं?" उसकी आवाज़ में स्नेह का भाव था।

"उन्होंने मुझसे यहाँ खड़े रहने को कहा... और... फिर वे उस तरफ चले गए।" मैंने शीशे के दरवाज़े की तरफ इशारा किया।

"तुम स्कूल जाते हो?"

"हाँ।"

"कौन-सी क्लास में हो?"

"पाँचवीं में।"

"बढ़िया। खूब अच्छे से पढ़ाई करो।" उसने प्यार से मेरे सिर पर थपकी दी, शीशे का दरवाज़ा खोला और भीतर चला गया। मैं वापस खिड़की में से देखने लगा। सारे कौवे उड़ चुके थे। अब उस डाली पर अन्य पक्षियों का झुण्ड बैठा था और सब चहचहा रहे थे। तभी एक लड़की और उसकी माँ ऊपर चढ़कर आईं।

"पिताजी कहाँ बैठते हैं अम्मा?" लड़की ने अपनी माँ से पूछा। जब वे दोनों दरवाज़े के पास पहुँचीं तो एक लम्बा आदमी बाहर निकला, उसने लड़की को गोद में खूब ऊँचा उठाया और झूला-सा झुला दिया।

फिर उसने बड़े प्यार से लड़की की माँ के गले में बाँह डाली और उन दोनों को भीतर ले गया। अचानक से मुझे मेरी माँ की याद आ गई। अम्मा अभी क्या कर रही होगी? वह कुंजेची के बालों में जूँ देख रही होगी, या फिर वलयेची की तलाश में नदी तक गई होगी। या हो सकता है वह एक हाथ से गौशाला की झाड़ू लगा रही हो

और दूसरे हाथ से अपनी भौंह का पसीना पोंछ रही हो। तभी खिड़की से एक हवा का झोंका आया और मेरा ध्यान अपनी माँ की तरफ से हटा।

मैं जहाँ खड़ा था, वहाँ से दाईं ओर देखने पर मुझे दिख रहा था कि शीशे के दरवाज़े के भीतर क्या चल रहा था। सफेद शर्ट वाले सर बहुत तेज़ी-से एक टेबल से दूसरी टेबल पर चीज़ें रख रहे थे। वे ज़रा भी स्थिर नहीं रह रहे थे, लोगों के बुलावों पर यहाँ-से-वहाँ हो रहे थे। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि वे कर क्या रहे थे। फिर एक समय, वे कोने में रखे

एक स्टूल पर बैठ गए और तौलिए से अपना पसीना पोंछने लगे। अच्चन कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। उन्हें गए हुए काफी देर हो गई थी। मेरे भीतर दुख और उदासी के बादल घुमड़ने लगे थे। मैंने प्रार्थना की कि, ये बादल आँसू बनकर मेरी आँखों से बरसने लगें, उसके पहले अच्चन वापस आ जाएँ। और तभी मैंने अच्चन को देखा। उनके सिर पर सामान पैक करने का बड़ा-सा डिब्बा रखा था। वे बड़े सधे हुए ढंग से नीचे उतरे, और उन्होंने मेरी तरफ देखा ही नहीं। कुछ देर बाद, वे फिर ऊपर आए। दो बार और वे डिब्बे उठाए, ऊपर-नीचे हुए।

फिर वे मेरे पास आए और मुझसे पूछा, "तुम्हें पता है तुम्हारे अच्चन बक्से में क्या लेकर जा रहे थे?"

मैंने 'ना' में सिर हिला दिया।

"पैसा! सौ रुपए के नोटों के ढेर!" अच्चन ने गर्व से कहा।

"पैसे के ढेर?" मैं तो भौंचक्का रह गया। मेरे विस्मय को देखकर धीरे-से हँसते हुए वे वापस भीतर चले गए।

इस बार वे जल्दी वापस आ गए और उन्होंने मुझे एक पैकेट थमा दिया। "कुट्टन, ये लो, खा लो।" अच्चन कभी-कभार ही मुझे 'कुट्टन' कहते थे। मैं तो खुशी के मारे लगभग रो ही दिया। मैंने पैकेट खोला तो देखा उसमें कुछ नाश्ता था, वैसा ही जैसा मैंने सड़क किनारे पड़ने वाली बेकरियों के काँच के खानों में रखा देखा था।

"हाँ, हाँ, खा लो," अच्चन ने कहा।

"मैं घर जाकर, बाकी सबके साथ बाँटकर खाऊँगा," मैंने कहा।

"ठीक है, तो पैकेट को अच्छे से मोड़कर रख लो," अच्चन ने कहा।

जब हम निकल ही रहे थे तो किसी ने आवाज़ लगाई, "अरे जॉन..." वही सफेद कपड़ों वाला व्यक्ति था। वह चकाचौंध कर देने वाले प्रकाश की भाँति दरवाज़े से भीतर आया।

"मैंने तुमसे कहा था कि जाने से पहले मुझसे मिलकर जाना," उसने कहा।

"अरे हाँ... मैं बस...," अच्चन ने अपना सिर खुजलाते हुए कहा।

उस आदमी ने अच्चन को एक बड़ा-सा पैकेट थमाया। "इसमें कुछ चीज़ें हैं। देखना अगर तुम्हारे काम आ जाएँ।" कहकर वह चला गया।

जब वह नीचे चला गया तो मैंने अच्चन से पूछा, "अचा, इस पैकेट में क्या है?"

"अच्छा इस पैकेट में? कुछ है। हम घर पहुँच जाएँ फिर मैं तुम्हें दिखाऊँगा।" अच्चन ने कहा। मैं उनसे फिर से पूछना चाहता था, लेकिन अच्चन के स्वभाव को जानते हुए मैं चुप रह गया। अच्चन मुझसे बहुत आगे निकल गए थे। मैं उन्हें मिलाने के लिए और तेज़ी-से चलने लगा, हालाँकि मुझे पता था कि मैं कितनी भी तेज़ चलूँ, उन्हें कभी नहीं मिला सकता था।

हम घर पहुँचे। हमें देखते ही वलयेट्टन दौड़ता हुआ हमारे पास आया, और अच्चन के हाथ से पैकेट लेकर उसे खोलने लगा। उसने पैकेट में से एक सफेद शर्ट और पैंट निकाली। उसने पैंट अपनी छाती से लगाई, तब भी पैंट के पाँयचे ज़मीन में लथुड़ रहे थे। इसके बाद वलयेची और कुंजेची घर से बाहर निकलीं, और उनके पीछे-पीछे, अम्मा। सिर्फ कुंजेट्टन ही कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। वह पक्के में अपना 'चप्पू' – जैसा कि अच्चन हमेशा उसके बैट को कहते थे – लेकर दोस्तों के साथ क्रिकेट खेलने गया होगा। सभी के चेहरे खुशी से दमक रहे थे। अपने परिवार के लोगों के खुशी भरे चेहरों को देखकर अच्चन गर्व से मुस्कुराने लगे मानो कह रहे हों, "मैं ये सब, और इसके अलावा और बहुत कुछ कर सकता हूँ।"

लेकिन मुझे कोई खुशी महसूस नहीं हो रही थी। मैं भीतर जाकर खटिया पर लेट गया। उस सर ने हमें उसके पुराने उतरे हुए कपड़े दिए थे।

इसमें इतना खुश होने की कौन-सी बात थी? अच्चन पहले भी अलग-अलग तरह के कपड़े घर ला चुके थे। इसका मतलब वे सब भी किसी के उतरे हुए कपड़े ही रहे होंगे। अचानक मेरे दिमाग में खयाल आया – जो शर्ट मैंने पहन रखी थी, वह भी 'नई' नहीं होगी!

जब अच्चन इस शर्ट को घर लाए थे तो अम्मा ने मुझसे कहा था, "कुट्टा, ज़रा इसे पहन... देखूँ तुझे फिट आती है या नहीं...।" और मैंने इसे पहनकर उन्हें बताया था कि यह मुझे एकदम फिट आई थी। अब मुझे समझ आ रहा है कि यह शर्ट भी अच्चन के ऑफिस के किसी सर के बच्चे की शर्ट होगी। मैं बीमार-सा महसूस करने लगा। अच्चन किसी और के पहने हुए कपड़े और बचा-खुचा खाना क्यों लाए थे? मैं अपने परिवार के बाकी लोगों के साथ बैठकर खुशी नहीं मना सकता था। मैं अपना भारी दिल लिए खटिया की लचीली सतह में घुस गया।

अँधेरा हो रहा था। मुझे सुनाई दे रहा था कि अम्मा मुझे पुकार रही थी, मेरी बहनें अपनी प्रार्थना में मशगूल थीं, कुंजेट्टन क्रिकेट खेलकर वापस आ गया था और चावल परोसने के लिए अम्मा के पीछे पड़ा था, वलयेट्टन यह कहकर बाहर जा रहा था कि वह जल्दी वापस आ जाएगा, और अच्चन नुक्कड़ की ताड़ी की दुकान पर जा रहे थे। मैं खटिया पर इस तरह पड़ा रहा जिससे सबको लगे कि मैं नींद में हूँ। फिर किसी समय मेरी आँख लग गई।

"मैं तुम्हें कब से आवाज़ दे रही हूँ! उठो, बेटा..।" अम्मा वहाँ खड़ी थी। "देखो, सब लोगों ने खाना शुरू कर दिया है..।" उन्होंने मुझे उठाने की कोशिश की लेकिन मैंने अपनी आँखें ज़ोर-से बन्द कर लीं और बिना कोई हरकत किए पड़ा रहा। अम्मा को पता था कि मैं सो नहीं रहा था, बल्कि किसी बात को लेकर नाखुश था।

"देखो, अच्चन ताड़ी की दुकान से मच्छी थोरन लाए हैं। जल्दी-से आ जाओ, इससे पहले कि बाकी लोग उसे सफा चट कर जाएँ।"

"मुझे नहीं खाना," मैंने कहा, यह दिखाते हुए जैसे कि मुझे कोई परवाह नहीं थी।

"उठ जा कुट्टा," अम्मा ने मुझे छूते हुए कहा।

"कहा ना मुझे नहीं खाना।" मैं चिल्लाया, लेकिन पूरी बात कह पाता, इसके पहले ही मैं रो दिया। सब चुप हो गए। अम्मा ने मुझे अपने से चिपका लिया। मेरे आँसू बह रहे थे और मैं

और ज़ोर-से रोने लगा। भीतर की सारी पीड़ा आँसू बनकर निकलने लगी। बाकी लोग जूठे हाथों के साथ ही दौड़कर वहाँ आ गए और खटिया के चारों ओर जमा हो गए।

"तुझे क्या हुआ बेटा?" अम्मा भी समझो रोने ही वाली थी।

"वो...वो पैंट-शर्ट... वो पुराने हैं...," मैं सिसकियाँ लेते हुए हकला रहा था। "वो सर अपने इस्तेमाल किए हुए कपड़े अच्चन को दे देते हैं..."

कुंजेची ने मेरे पास आकर मुझे गले से लगा लिया और धीरे-धीरे रोने लगी। पूरे घर में खामोशी छा गई थी। कुछ समय बाद, वलयेट्टन मेरे पास आया और मेरी खटिया के बगल में घुटनों के बल बैठ गया। धीमी-सी मुस्कान के साथ वह बोला, "अगर कुट्टन को यह अच्छा नहीं लगता, तो मुझे भी ये पुराने, रद्दी कपड़े नहीं चाहिए। सुबह होने दो, हम इन्हें नदी में फेंक देंगे!"

मैंने वलयेट्टन के गले में हाथ डाला। उसने अपनी आँखें इस तरह चढ़ा लीं ताकि आँसू न गिरें। अम्मा के चेहरे पर अब सुकून दिखाई दे रहा था। वलयेची तो जमकर रो रही थी। अच्चन थोड़ा झेंप-से रहे थे, और मुझसे आँखें नहीं मिला रहे थे।

सिर्फ कुंजेट्टन मुझे इस तरह देखता जा रहा था मानो उसे समझ ही ना आ रहा हो कि यह सब चल क्या रहा था।

उस रात हम सब बहुत देर से सोने गए। जब मुझे पक्का हो गया

कि सब लोग सो गए थे तो मैं अम्मा के कानों में फुसफुसाया, "अम्मा, अच्चन उस आदमी को 'सर' क्यों कहते हैं? अच्चन उसके पुराने कपड़े घर क्यों ले आते हैं?" अम्मा ने मेरे आँसू पोंछे और मेरे बालों को सहलाया। वह बुदबुदाते हुए बोली, "बड़े होकर तुम ये सब समझ जाओगे।"

अम्मा की उंगलियों से आहिस्ता-आहिस्ता टपककर नींद मेरी आँखों में समाने लगी।

एम आर रेणुकुमार: कवि, चित्रकार और अनुवादक। अर्थशास्त्र में एम.फिल.। आपके तीन कविता संग्रह, निबन्ध और संस्मरण प्रकाशित हो चुके हैं। स्टेट ऑडिट विभाग, कोट्टायम, केरल में कार्यरत।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: भरत त्रिपाठी: एकलव्य, भोपाल के प्रकाशन समूह के साथ कार्यरत हैं।

सभी चित्र: शिवांगी सिंह: स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं। कॉलेज ऑफ आर्ट, दिल्ली से चित्रकला, फाइन आर्ट्स् में स्नातक। स्कूल ऑफ कल्चर एंड क्रिएटिव एक्सप्रेशन्स, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़्युअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। दिल्ली में निवास।

यह कहानी *तूलिका* द्वारा प्रकाशित पुस्तक *बीइंग बॉय्ज़* से ली गई है। इस पुस्तक की सम्पादक दिया नायर व राधिका मेनन हैं।